REG. NO. RAJHIN /2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चोखी खेती

मई 2024

कृषक उत्थान के लिए : राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन

कोमल सिंह[1], प्रसन्नलता आर्य[2], राजेश कुमार वर्मा[3], सीमा त्यागी[4] एवं सिफ्ती[5]

कृषि उत्पादकता को निरंतर बनाए रखने के लिए प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा और जल की गुणवत्ता और उपलब्धता महत्वपूर्ण हैं। विशिष्ट उपायों के माध्यम से इन दुर्लभ प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और निरंतर प्रयोग को बढ़ावा देकर कृषि विकास को संधारणीय बनाया जा सकता है। भारत में वर्षा सिंचित क्षेत्र का लगभग 60 प्रतिशत विशुद्ध बुआई क्षेत्र है, जो देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में लगभग 40 प्रतिशत का योगदान देता है। इसलिए देश में खाद्यान्नों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए वर्षा सिंचित कृषि जोतों का विकास और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (एनएमएसए) को इसी उद्देश्य से बनाया गया है, विशेष रूप से वर्षा सिंचित क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के लिए एकीकृत खेती, संसाधन संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन और जल प्रयोग कोशलीकरण।

राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (एनएपीसीसी) में सूचीबद्ध आठ मिशनों में से एक, सतत कृषि मिशन, एनएमएसए को अधिदेश देता है। मिशन दस्तावेज में वर्णित कार्यनीतियां और कार्रवाई कार्यक्रम (पीओए), जिसे जलवायु परिवर्तन पर प्रधानमंत्री परिषद (पीएमसीसीसी) ने 2–9–2010 को औपचारिक रूप से मंजूर किया गया था, भारतीय कृषि के 10 प्रमुख आयामों को लक्षित करता है। उन्नत फसल बीज, पशुधन और मत्स्य पालन, जल प्रयोग दक्षता, नाशीजीव प्रबंधन, उन्नत फार्म आजीविका विविधीकरण भी शामिल है, लेकिन मुख्य लक्ष्य सतत कृषि को बढ़ावा देने के लिए अनुकूलन उपायों की एक श्रृंखला का अंगीकरण करना है। 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान, ये उपाय कृषि एवं सहकारिता विभाग (डीएसी) के चालू मिशनों, कार्यक्रमों और स्कीमों में पुनर्गठित और सरल बनाए जाएंगे। एनएमएसए का गठन मृदा और जल संरक्षण, कोशल जल प्रयोग, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन और वर्षा सिंचित क्षेत्र विकास पर विशेष जोर देता है। एनएमएसए समुदाय आधारित दृष्टिकोण के माध्यम से लोगों को संसाधनों का सही उपयोग करने का प्रोत्साहन देगा।

एनएमएसए जल प्रयोग दक्षता, पोषक तत्व प्रबंधन और आजीविका विविधीकरण के महत्वपूर्ण पहलुओं को नियंत्रित करेगा. इसके लिए, वह पर्यावरण हितैषी प्रौद्योगिकियों, ऊर्जा कोशल उपकरणों के अंगीकरण, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, एकीकृत खेती और अन्य क्षेत्रों के निरंतर विकास को अपनाएगा। साथ ही, एनएमएसए का लक्ष्य मृदा और स्वास्थ्य प्रबंधन, वर्द्धित जल प्रयोग कोशल, रसायनों का समुचित प्रयोग, फसल विविधीकरण, फसल–पशुधन कृषि प्रणालियों का प्रगामी अंगीकरण और एकीकृत दृष्टिकोणों (जैसे मत्स्यपालन, कृषि–वानिकी, फसल–रेशम कीट) को बढ़ावा देना है।

एनएमएसए मिशन के उद्देश्य

- कृषि को स्थान देकर अधिक उत्पादक, सतत, लाभकारी और जलवायु प्रत्यास्थ बनाना
- मृदा और नमी संरक्षण उपायों का उपयोग करके प्राकृतिक संसाधनों को बचाना
- मृदा उर्वरता मानचित्रों, बृहत और सूक्ष्म पोषक तत्वों के मृदा परीक्षणों पर आधारित अनुप्रयोक्ता समुचित उर्वरकों के प्रयोग सहित व्यापक मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन प्रणालियों का प्रयोग करना
- प्रति बूंद अधिक फसल उत्पादन के लिए जल संसाधनों का प्रभावी उपयोग करके

[1]छात्रा– विद्यावाचस्पति (प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबन्धन), सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, [2]सहायक आचार्य (प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबन्धन), सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, [3]आचार्य (प्रसार शिक्षा), प्रसार शिक्षा निदेशालय, [4]सहायक आचार्य (प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबन्धन), सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, [5]छात्रा– विद्यावाचस्पति (प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबन्धन), सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राज.)

कुशल जल प्रबंधन।

- किसानों और पणधारियों को जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और अल्पीकरण से जुड़े अन्य चालू मिशनों (जैसे राष्ट्रीय कृषि विस्तार एवं प्रौद्योगिकी मिशन, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, राष्ट्रीय कृषि जलवायु प्रत्यास्थाता पहल (एनआईसीआरए) के साथ मिलकर काम करना।
- महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम (मनरेगा), एकीकृत पनधारा कार्यक्रम (आईडब्ल्यूएमपी), आरकेवीवाई और अन्य योजनाओं और मिशनों से संसाधनों को लेकर और एनआईसीआरए के माध्यम से वर्षा सिंचित कृषि प्रौद्योगिकियों को मुख्य धारा में लाते हुए वर्षा सिंचित कृषि की उत्पादकता को सुधारने के लिए चयनित ब्लाकों में प्रायोगिक मॉडल।

मिशन के कार्य अथवा घटक

एनएमएसए कार्यक्रम में चार प्रमुख भाग हैं

1. वर्षा सिंचित क्षेत्र विकास (आरएडी)

आरएडी कृषि प्रणालियों और प्राकृतिक संसाधनों की वृद्धि और संरक्षण के लिए क्षेत्र आधारित दृष्टिकोण अपनाएगा। यह घटक 'वाटरशेड प्लस फ्रेमवर्क' में तैयार किया गया है, जिसमें मनरेगा, एनडब्ल्यूडीपीआरए, आरवीपी एंड एफपीआर, आरकेवीवाई, आईडब्ल्यूएमपी और अन्य संगठनों के माध्यम से पन्नधारा विकास और मृदा संरक्षण की संभावित उपयोगिता की खोज की गई है। यह घटक कृषि के एकीकृत बहुघटकों (फसल, बागवानी, पशुधन, मछली पालन और कृषि आधारित आय उत्पन्न करने वाली गतिविधियों) के माध्यम से वानिकी और मूल्य संवर्धन के माध्यम से समुचित कृषि प्रशिक्षण शुरू करेगा। इसमें स्थानीय कृषि जलवायु स्थितियों के अनुकूल मृदा परीक्षण और मृदा स्वास्थ्य कार्डों पर आधारित पोषक तत्व प्रबंधन प्रणालियों को भी बढ़ावा दिया जाएगा. इसमें संसाधन संरक्षण, फसल चयन और फार्म भूमि विकास भी शामिल हैं। 100 हैक्टेयर या उससे अधिक के कलस्टर आधारित दृष्टिकोण (एक गांव या समीपस्थ गांव में काफी निकटता वाले दुर्गम क्षेत्रों में) को बृहतर क्षेत्रों में समरूपता के दृश्य प्रभाव को देखने, स्थानीय सहभाविता को बढ़ावा देने और भावी प्रकृति के लिए अपनाया जाएगा. इस प्रकार, अभिबिंदुता के ध्यानाकर्षण प्रभाव को प्राप्त करने और स्थानीय भागीदारी को बढ़ावा देने के अभिसारी कार्यक्रमों में संसाधन संरक्षण कार्यों के बीच की खाई को भरने के लिए इस घटक से अतिरिक्त सहायता स्वीकार्य होगी। आरएडी समूहों को प्रस्तावित कार्यों को युक्तिसंगत बनाने के लिए मृदा विश्लेषण, मृदा स्वास्थ्य कार्ड या मृदा संवेक्षण मानचित्र रखना चाहिए. इसके अलावा, कृषि प्रणाली क्षेत्र का कम से कम 25 प्रतिशत क्षेत्र आन फार्म जल प्रबंधन के अधीन होना चाहिए। एकीकृत परियोजना योजना बनाते समय, आईसीएआर की आकस्मिक योजनाओं द्वारा सुझाए गए कृषि प्रणालियों और एनआईसीआरए परियोजनाओं के सफल परिणामों को भी विचार किया जाएगा। इसके अलावा, इस खंड में साझा सम्पत्ति संसाधनों, परिसंपत्तियों और सार्वजनिक सेवाओं (जैसे अनाज बैंक, बायोमास श्रेडर्स, चारा बैंक) के सृजन और विकास को प्रोत्साहित किया जाएगा।

2. फार्म पर जल प्रबंधन (ओएफडब्ल्यूएम)

कुशल आन फार्म जल प्रबंधन प्रौद्योगिकियों और उपकरणों को बढ़ावा देकर ओएफडब्ल्यूएम प्राथमिक रूप से वर्धित जल प्रयोग कोशल पर फोकस करेगा। यह न केवल प्रयोग कौशल पर फोकस करेगा बल्कि, आरएडी घटक के साथ मिलकर, वर्षा जल के प्रभावी संचयन एवं प्रबंधन पर भी जोर देगा। जल संरक्षण प्रौदयोगिकियां, कुशल सुपुर्दगी और वितरण प्रणलियां अपनाने के लिए सहायता बढ़ाई जाएगी। जल प्रयोक्ता संघों इत्यादि को विकसित करके सांझे के संसाधनों के समान वितरण और व्यवस्था पर भी जोर दिया जाएगा। फार्म पर ही जल संरक्षण के लिए, मनरेगा निधियों का प्रयोग करते हुए फार्म तालाबों की खुदाई की जा सकती है और अर्थ रिमूविंग मशीनरी (मनरेगा के अंतर्गत खुदाई की सीमा तक साध्य नहीं है)।

3. मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन (एसएचएम)

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन (एसएचएम) का उद्देश्य अवशिष्ट प्रबंधन, स्थान और फसल विशिष्ट सतत मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, बृहत–सूक्ष्म पोषक तत्व प्रबंधन, मृदा उर्वरता मानचित्रों के सृजन और जुड़ाव, जैविक खेती प्रणालियों, भूमि क्षमता पर आधारित समुचित भूमि प्रयोग, उर्वरक का समुचित प्रयोग और मृदा अपरदन और अवक्रमण को कम करना भूमि और मृदा विशेषताओं से संबंधित मानचित्रों और डाटाबेस के आधार पर भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) के माध्यम से तैयार की गई भूमि प्रयोग और मृदा विशेषताओं पर आधारित विभिन्न उन्नत पैकेजों के लिए व्यापक फील्ड स्तर वैज्ञानिक सर्वेक्षणों को सहायता दी जाएगी। इसके अलावा, यह घटक मृदाओं (अम्लीय, क्षारीय, लवणीय) के सुधार में भी मदद करेगा। राज्य सरकार, राष्ट्रीय जैविक कृषि केन्द्र (एनसीओएफ), केन्द्रीय उर्वरक गुणवत्ता नियंत्रण एवं प्रशिक्षण संस्थान (सीएफक्यूसी एंड आईटी) और भारतीय मृदा और भू उपयोग सर्वेक्षण (एसएल यूएसआई) इस योजना को लागू करेंगे। राज्यों को शक्ति पर निर्भर करते हुए, सार्वजनिक निजी साझेदारी मॉडल को अपनाया जा सकता है ताकि मृदा परीक्षणों को समय पर और पर्याप्त मात्रा में कराया जा सके, जैसा कि कृषि विभाग ने अवसंरचना और कर्मचारी स्तर पर किया है। निजी पक्षकारों को जिले के विभिन्न क्षेत्रों में मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएं बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

4. जलवायु परिवर्तन और निरंतर कृषि नेटवर्किंग, मोनिटरिंग और मोडलिंग (सीसीएसएएमएमएन)

सीसीएसएएमएमएन जलवायु स्मार्ट संधारणीय प्रबंधन प्रणालियों और स्थानीय कृषि जलवायु स्थितियों के उपयुक्त एकीकृत कृषि प्रणाली के क्षेत्र में प्रायोगिक जलवायु परिवर्तन अनुकूलन, अल्पीकरण, अनुसंधान और मॉडल परियोजनाओं के रूप में जलवायु परिवर्तन संबंधित सूचना और ज्ञान (भूमिधकिसानों के लिए अनुसंधानध्वैज्ञानिक स्थापना और विलोमतरू) प्रचार–प्रसार और सृजन तकनीकी कार्मिकों के समर्पित विशेषज्ञ दल को एनएमएसए के भीतर एक संस्था बनाया जाएगा, जो वर्ष में तीन बार मिशन की गतिविधियों की कड़ाई से निगरानी और मूल्यांकन करेगी, और इसके बारे में राष्ट्रीय

समिति को सूचित करेगी। वर्षा सिंचित प्रोदयोगिकियों, योजना, अभिसरण और समन्वय के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य प्रणाली तंत्र का निर्देशन करने के लिए मनरेगा, आईडब्ल्यूएमपी, आरकेवीवाई, एनएफएसएम, एनएचएम और एनएमएडुटी जैसे अग्रणी कार्यक्रमों और मिशनों की सहायता की जाएगी। कृषि, पशुधन और अन्य उत्पादन प्रणालियों के मध्य आदान और उत्पाद प्रवाह की ऐसी एकीकृत कार्रवाई से स्थानीय उत्पादन प्रणालियों को सततता मिलेगी और सिंचित उत्पादन प्रणालियों को बढ़ावा मिलेगा। राज्य सरकार कृषि विश्वविद्यालयों (एसएयू), कृषि विज्ञान केन्द्रों (केवीके), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) संस्थानों और अन्य ज्ञान भागीदारों के साथ मिलकर एक परिसंघ दृष्टिकोण विकसित करेगी, जो किसानों को एकमात्र सुविधा पटल या ज्ञान प्रदाता प्रणाली प्रदान करेगा। राज्यों को अवधारणा को संस्था का रूप देने और अतिरिक्त विकास कार्यों को पूरा करने के लिए धन प्रदान किया जा सकता है। जलवायु परिवर्तन से संबंधित मानीटरिंग, पुष्टि, ज्ञान नेटवर्किंग और कोशल विकास के लिए भी राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, आईसीएआर के राष्ट्रीयध्अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों, केवीके और सार्वजनिकधनिजी आर एंड डी संगठनों से सहायता मिलेगी। दस्तावेजीकरण और प्रकाशन, घरेलू और विदेशी प्रशिक्षण, कार्यशालाएं और सम्मेलन आदि अध्ययन की सहायता करेंगे।

मिशन की कार्यनीति

मिशन के उद्देश्यों को हासिल करने के लिए, एनएमएसए निम्नलिखित बहु–कार्यक्रम कार्यनीति का अनुसरण करेगा

1. अनुपूरक/अवशिष्ट उत्पादन प्रणालियों के माध्यम से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने, आजीविका अवसर बढ़ाने फसल विफलता को न्यूनतम करने के लिए फसल, पशुधन एवं मत्स्य पालन, बागवानी और चारागाह आधारित संयुक्त कृषि को शामिल करते हुए एकीकृत कृषि प्रणाली को बढ़ावा देना।
2. संसाधन संरक्षण प्रौदयोगिकियों (आन फार्म और आफ फार्म दोनों) को लोकप्रिय बनाना और ऐसी पद्धतियां प्रारंभ करना जो चरम जलवायु घटनाओं या आपदाओं जैसे लम्बे सूखा दौर, बाढ़ इत्यादि के समय पर अल्पीकरण प्रयासों में सहायता करेंगे ।
3. उपलब्ध जल संसाधनों के प्रभावी प्रबंधन को बढ़ावा देना और मांग एवं आपूर्ति पक्ष प्रबंधन समाधानों से जुड़ी हुई प्रौद्योगिकियों के अनुप्रयोग के माध्यम से जल प्रयोग कौशल बढ़ाना।
4. उच्चतर फार्म उत्पादकता, उन्नत मृदा उपचार, वर्धित जल धारण क्षमता, रसायनों ध्ऊर्जा का समुचित प्रयोग और वर्धित मृदा कार्बन भंडारण के लिए उन्नत कृषि पद्धतियों को प्रोत्साहित करना।
5. स्थान और मृदा विशिष्ट फसल प्रबंधन पद्धतियों के अपनाने एवं इष्टतम उर्वरक प्रयोग को सुकर बनाने के लिए जीआईएस प्लेटफार्म पर भूमि प्रयोग सर्वेक्षण, मृदा रूपरेखा अध्ययन और मृदा विश्लेषण के माध्यम से मृदा संसाधनों पर डाटाबेस सृजित करना।
6. मृदा स्वास्थ्य सुधारने, वर्धित फसल उत्पादकता और भूमि एवं जल संसाधनों की गुणवत्ता कायम रखने के लिए स्थान और फसल विशिष्ट एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन पद्धतियों को बढावा ठेना।
7. विशिष्ट कृषि जलवायु स्थितियों के लिए जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और अल्पीकरण कार्यनीतियों में जानकार संस्थानों और व्यवसायिकों को सम्मिलित करना। मनरेगा, आईडब्ल्यूएमपी, आरकेवीवाई, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (एनएफएसएम) एकीकृत बागवानी विकास मिशन (एमआईडीएच), राष्ट्रीय कृषि विस्तार एवं प्रौदयोगिकी मिशन (एनएमएई एंड टी) इत्यादि जैसी अन्य स्कीमोंधमिशनों से समन्वय, परिवर्तन और निवेश उठा करके अलाभ के क्षेत्रों में एवं स्थिति विशिष्ट नियोजन से और अधिक पहुंच के साथ वर्षा सिंचित प्रौदयोगिकियों के प्रचार–प्रसार और अंगीकरण के माध्यम से एकीकृत विकास सुनिश्चित करने के लिए प्रायोगिक के रूप में चुनिंदा ब्लाकों में जलवायु पैरामीटरों के प्रेरक क्षमता के अनुसार कार्यक्रम मूलक अंतःक्षेप। किसान समुदाय के लाभ के लिए एकल सुविधा पटलध्प्रदाता उपलब्धकर्ता प्रणाली उपलब्ध कराने के लिए राज्य सरकार द्वारा राज्य कृषि विश्वविद्यालयों (एसएयू), कृषि विज्ञान केन्द्रों (केवीके), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) केन्द्रों, व्यवसायिक संगठनों इत्यादि जैसे जानकार भागीदारों सहित विभिन्न पणधारियों के साथ एक संघीय दृष्टिकोण विकसित किया जा सकता है ।
8. राज्य सरकार चयन की पारदर्शी प्रणाली और पर्यवेक्षण की परिभाषित प्रक्रिया के माध्यम से उन क्षेत्रों में जहां सीमित सरकारी अवसंरचना उपलब्ध है, एक लाईन विभाग के माध्यम से मानिटरिंग के मामले में समूहध्ग्राम विकासयोजना के कार्यान्वयन के लिए ख्याति प्राप्त एजेंसियों को लगा सकती है।
9. विभिन्न घटकों की तकनीकी व्यवहार्यता और जलवायु प्रत्यास्था लाने के बारे में उनकी प्रभावशीलता पर नियमित अदयतन सूचनाओं के लिए राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के लिए अनूकूलन मुद्दे और जलवायु परिवर्तन अल्पीकरण पर मजबूत तकनीकी मानिटरिंग एवं प्रतिपुष्टि प्रणालियों केन्द्रीय संस्थानों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञ ऐसी तकनीकी मानिटरिंगध्प्रति पुष्टि के भाग होंगे। कार्यान्वयन एजेंसियों के क्षमता निर्माण को मैनेज दवारा संभाला जाएगा।
10. राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना के तत्वाधान में एनएमएसए के मिशन दस्तावेज में रेखांकित अंतरूक्षेपों के कार्यान्वयन संपर्क, समीक्षा और समन्वयन के लिए प्लेटफार्म स्थापित करना।

संचार के साधनों का सफर

अरविन्द यादव और प्रियंका वर्मा

आज 21वीं सदी में संचार के साधनों के बिना जीवन की कल्पना भी मुश्किल है। प्राचीन काल में कबूतरों, बाज जैसे पक्षियों के द्वारा संदेश का आदान प्रदान किया जाता था। जिससे संदेश पहुंचने में काफी समय लग जाता था। अतीत से लेकर अब तक संचार के साधनों/माध्यमों का सफर इस आलेख में उल्लेखित किया गया है।

धुएं द्वारा संदेश – आठवीं सदी के आसपास धुएं द्वारा दिए गए संदेश लंबी दूरी के संचार के दृश्य संचार का एक रूप है। सामान्य तौर पर धुएं के माध्यम से दिए गए, संदेश का उपयोग समाचार प्रसारित करने, खतरे का संकेत देने या लोगों को एक आम क्षेत्र में इकट्ठा करने के लिए किया जाता था।

प्राचीन चीन में महान दीवार के किनारे के सैनिकों ने एक दूसरे को दुश्मन के आक्रमण की चेतावनी देने के लिए बीकन टावरों पर धुएं के संदेश भेजे थे। धुएं के रंग ने हमलावर दल के आकार का संचार किया।

संदेशवाहक कबूतर – ग्यारहवीं सदी में कबूतर संचार के माध्यम के रूप में चिट्ठी भेजने का कार्य करते थे। कबूतर किसी के पत्र या संदेश को एक जगह से दूसरी जगह लेकर जाते थे, कबूतर भी इतने समझदार थे कि वो चिट्ठी को पहुंचाने के बाद वापस सही स्थान पर आ जाते थे। कबूतरों का उपयोग सैन्य स्थितियों में भी बड़े प्रभाव के लिए किया गया है, और इस मामले में उन्हें युद्ध कबूतर के रूप में जाना जाता है। संचार की एक विधि के रूप में यह संभवतः प्राचीन फारसियों जितना पुराना है जिनसे पक्षियों को प्रशिक्षण देने की कला संभवतः आई थी। 2000 साल पहले रोमनों ने अपनी सेना की सहायता के लिए कबूतर दूतों का इस्तेमाल किया था।

भारत में उड़ीसा पुलिस ने कटक छत्रपुर केंद्रपाड़ा संबलपुर और डेनकनाल में नियमित कबूतर चौकियाँ स्थापित की हैं। और ये कबूतर आपात्कालीन और प्राकृतिक आपदाओं के समय मौके पर मौजूद रहते हैं। 1954 में भारतीय डाक सेवा के शताब्दी समारोह के दौरान उड़ीसा पुलिस के कबूतरबाजों ने भारत के राष्ट्रपति से प्रधानमंत्री तक उद्घाटन का संदेश पहुंचाकर अपनी क्षमता का प्रदर्शन किया। दुनिया में कबूतर पोस्ट सेवाओं में से आखिरी कटक भारत में एक 2008 में बंद कर दी गई थी हालांकि कटक में और अंगुल में पुलिस प्रशिक्षण कॉलेज में औपचारिक उद्देश्यों के लिए लगभग 150 कबूतरों का रखरखाव जारी है।

प्रिंटिंग प्रेस – एक यांत्रिक युक्ति है जो दाब डालकर कागज, कपड़े आदि पर प्रिन्ट करने के काम आती है। कपड़ा या कागज आदि पर एक स्याही युक्त सतह रखकर उस पर दाब डाला जाता है जिससे स्याहीयुक्त सतह पर बनी छवि उल्टे रूप में कागज या कपड़े पर छप जाती है। भारत में प्रिंटिंग प्रेस लाने का श्रेय पुर्तगालियों को जाता है। 1684 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना कि थी।

टेलीग्राफ – संवाद एवं समाचारों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने तथा प्राप्त करने वाला यंत्र तारयंत्र या टेलीग्राफ कहलाता है। वर्तमान में यह प्रौद्योगिकी अप्रचलित हो गयी है। टेलीग्राफ का सर्वप्रथम प्रयोग स्कॉटलैंड के वैज्ञानिक डॉ० माडीसन ने 1753 में किया। इसको मूर्त रूप देने में ब्रिटिश वैज्ञानिक रोनाल्ड का हाथ था। जिन्होने1838 में तार द्वारा खबरें भेजने की व्यावहारिकता का प्रतिपादन सार्वजनिक रूप से किया।

फैक्स मशीन – फैक्स मशीन का आविष्कार अलेक्जेंडर बैन ने सन 1843 में किया था। फैक्स मशीन एक इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस होती है। इस मशीन का प्रयोग ए.टी.डी टेलीफोन के साथ जोड़कर किया जाता है। इस मशीन की सहायता कोई भी व्यक्ति दुनिया के किसी भी कोने में बैठकर डॉक्यूमेंट भेज या मंगवा सकता है। इसका मूल रूप से उपयोग व्यापार में किया जाता था।

भारतीय तार सेवा (टेलीग्राम सर्विस) 1850 में कोलकाता और डायमंड हार्बर के बीच तार सेवा शुरू हुई,जिसे ईस्ट इंडिया कंपनी स्टाफ इस्तेमाल करती थी। 1854 में ये पब्लिक के लिए शुरू हुई, एक वक्तलाखों लोगों के लिए यह संदेश पहुंचाने का सबसे तेज जरिया होता था। सस्तीकॉल और ईमेल के दौर में 14 जुलाई 2013 को टेलीग्राम सर्विस यानी भारतीय तार सेवा ने अपनी अहमियत गंवा दी।

भारतीय डाक सेवा – भारतीय डाक सेवा की स्थापना यूं तो 170 साल पहले एक अप्रैल 1854 को हुई थी, लेकिन सही मायनों में इसकी स्थापना एक अक्टूबर 1854 को मानी जाती है। तब तत्कालीन भारतीय वायसराय लॉर्ड डलहौजी ने इस सेवा का केंद्रीकरण किया था। उस वक्त ईस्ट इंडिया कंपनी के अंतर्गत आने वाले 701 डाकघरों को मिलाकर भारतीय डाक विभाग की स्थापना हुई थी। भारतीय डाक सेवा वर्तमान में भी कार्यरत है।

दूरभाष या टेलीफोन – दूरभाष या टेलीफोन दूरसंचार का एक उपकरण है।

[1]शोध छात्र, कृषि विस्तार एवं संचार विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

यह दूर बैठे लोगों के बीच बातचीत कराने का माध्यम बनता है। विश्व भर में आजकल यह सर्वाधिक प्रचलित घरेलू उपकरण है। टेलीफोन का अविष्कार अलेक्जेंडर ग्राहम ने किया था 10 मार्च 1876 को उनके टेलीफोन अविष्कार का पेटेंट मिला था ।

रेडियो – रेडियो का अविष्कार प्रसिद्ध वैज्ञानिक गुग्लिल्मो मोरकोनी ने वर्ष 1890 में रेडियो का अविष्कार किया था। वर्ष 1896 को रेडियो का पेटेंट रिकॉर्ड मिला और इसके बाद उन्हें रेडियो का आधिकारिक अविष्कारक मान लिया गया।

भारत में रेडियो की शुरुआत 23 जुलाई 1927 को हुई। रेडियो क्लब ऑफ बॉम्बे से शुरू हुआ सफर 94 साल बाद देश की 99 प्रतिशत आबादी तक पहुंच चुका था। 23 जुलाई 1927 को बॉम्बे और 5 महीने बाद कलकत्ता में रेडियो का प्रसारण शुरू हुआ। 12 साल बाद अक्टूबर 1939 में ऑल इंडिया रेडियो की विदेश सेवा शुरू की गई।

वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग – 1920 के दशक में एटी.एंड.टी कम्पनी के बेल लैब्स और जॉन लोगी बेयर्ड ने इसका अविष्कार किया था। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग आधुनिक संचार तकनीक है, इसके माध्यम से अलग स्थानों से एक साथ आमने सामने बैठकर व बोलकर अपनी राय या विचार विमर्श कर सकते है। इसे वीडियो टेलीकॉन्फ्रेंस भी कहा जाता है। इसका प्रयोग किसी बैठक या सम्मेलन के लिए किया जाता है। वर्तमान में यही तकनीक काफी कारगार साबित हो रही है।

वर्तमान में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के अलग–अलग एप्लीकेशन जिनमें गूगल मीट, डुओ और स्काइप शामिल है।

पेजर– पेजर, पोर्टेबल मिनी रेडियो फ्रीक्वेंसी डिवाइसथे। जिसके द्वारात्वरित वॉयस मेसेज भेजे और प्राप्त किएजा सकते थे। पेजर की खोज 1921 में ए. एल.ग्रॉस द्वारा की गयी थी।

टेलेक्स सेवा – वर्ष 1963 में राष्ट्रीय टेलेक्स सेवा आरम्भ की गई, प्रथम देवनागरी टेलेक्स का शुभारम्भ 1969 में दिल्ली में हुआ। टेलेक्स के माध्यम से संदेश टेली प्रिंटर मशीन से सीधे गन्तव्य पर भेजे जाते हैं, प्राप्तकर्ता के टेलेक्स पर बने कागज पर मुद्रित हो जाता हैं।

वायरलेस–

बिना तार के सूचना पहुँचाना वायरलेस कहलाता हैं। वायरलेस विशिष्ट तरंग दैधर्य पर कार्य करता हैं। इसका उपयोग मुख्यतया हवाई जहाज संचालन, खुफिया विभाग एवं पुलिस विभाग में तत्काल सूचना आदान प्रदान करने में होता हैं। मिलिट्री में प्रमुखता वायरलेस ही कारगर संचार व्यवस्था सिद्ध हो रही हैं।

इंटरनेट – इंटरनेट की शुरुआत आज से 54 साल पहले यानी 1969 में हुई थी अमेरिका के डिफेंस डिपार्टमेंट के डवांस्ड रिसर्च प्रोजेक्ट्स एजेंसी ने 4 यूनिवर्सिटी के कंप्यूटर नेटवर्किंग के जरिए कनेक्ट करके इंटरनेट को पॉसिबल बनाया था।

भारत में इंटरनेट की शुरुआत 1986 में हुई थी, और यह केवल शैक्षिक और अनुसंधान समुदाय के लिए उपलब्ध था। इंटरनेट तक आम जनता की पहुंच 15 अगस्त 1995 को शुरू हुई और 2023 तक 1.5 बिलियन सक्रिय इंटरनेट उपयोगकर्ता हैं।

वर्तमान में इंटरनेट का उपयोग

1. सोशल नेटवर्किंग – सोशल नेटवर्किंग साइट्स इंटरनेट का सबसे लोकप्रिय उपयोग है। यह युवा पीढ़ी के लिए विशेष रूप से सच है। लोग अपने परिवार और दोस्तों से जुड़ने लिए इन प्लेटफार्मों का उपयोग करते हैं। दुनिया भर में लगभग तीन अरब लोग फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम और अन्य सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग करते हैं। जब भारत की बात आती है, तो एक रिपोर्ट के अनुसार, देश में सोशल मीडिया का उपयोग अब तक के उच्चतम स्तर पर है।

2. ऑनलाइन शॉपिंग –इंटरनेट का एक अन्य उपयोग ऑनलाइन शॉपिंग है। लोग ई–कॉमर्स वेबसाइटों से सामान और सेवाएँ खरीदने के लिए इंटरनेट कनेक्शन का उपयोग करते हैं।

3. शिक्षा – इंटरनेट ने लोगों के लिए शिक्षा प्राप्त करना अधिक सुलभ बना दिया है। ढेर सारी शैक्षिक वेबसाइटें, ट्यूटोरियल और ऑनलाइन पाठ्यक्रम हैं जो लोगों को नए कौशल सीखने में मदद कर सकते हैं। लोग दुनिया भर के शीर्ष विश्वविद्यालयों और संस्थानों से वहां शारीरिक रूप से उपस्थित हुए बिना भी ऑनलाइन पाठ्यक्रम ले सकते हैं।

5. गेमिंग – विश्व और विशेष रूप से भारत में इंटरनेट कनेक्शन उपयोगकर्ताओं में तीव्र वृद्धि देखी गई है। इससे गेमिंग उद्योग में भी उछाल आया है । लोग एकल–खिलाड़ी और मल्टीप्लेयर वीडियो गेम खेलने के लिए इंटरनेट का उपयोग करते हैं।

6. ट्रेडिंग – पहले स्टॉक ट्रेडिंग कुलीन वर्ग के लिए आरक्षित थी। ऐसा कहा जा सकता है कि आम आदमी की शेयर बाजार तक पहुँच न के बराबर थी। हालाँकि इंटरनेट के बढ़ने के साथ स्टॉक ट्रेडिंग सभी के लिए सुलभ हो गई है। लोग अपने घरों से ऑनलाइन स्टॉक का व्यापार कर सकते है, और अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं।

8. ईमेल संचार

इंटरनेट ने लोगों के लिए दुनिया में कहीं से भी एक दूसरे से संवाद करना संभव बना दिया है। लोग एक–दूसरे को ईमेल भेज सकते हैं, और समूह वार्तालाप भी सेट कर सकते हैं।

9. ई–समाचार पत्र

पुराने जमाने में लोगों को अपने दरवाजे तक अखबार पहुंचाने के लिए इंतजार करना पड़ता था। हालाँकि अखबार के पन्ने पलटने के अनुभव को कोई भी मात नहीं दे सकता लेकिन इंटरनेट ने लोगों के लिए एक बटन के क्लिक पर विश्व समाचारों से अपडेट रहना आसान बना दिया है।

10. अनुसंधान

इंटरनेट ने लोगों के शोध करने के तरीके में क्रांति ला दी है। लोग अब

अपनी रुचि के किसी भी विषय पर लेख, किताबें और रिपोर्ट आसानी से खोज सकते हैं। इससे उनके लिए जानकारी के विश्वसनीय और अद्यतित स्रोत ढूंढना बहुत आसान हो जाता है। गूगल स्कॉलर, मीडियम, एचबीआर और अन्य शोध प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ताओं को शोध पत्रों और लेखों की एक विस्तृत श्रृंखला तक पहुंचने में सहायता करते हैं। इससे उनके लिए पुस्तकालयों और अभिलेखागारों में भटके बिना आवश्यक जानकारी प्राप्त करना आसान हो जाता है। यह आलेख भी इंटरनेट का उपयोग करके ही लिखा गया है!

कृत्रिम उपग्रह– कृत्रिम उपग्रह अंतरिक्ष में रहकर पृथ्वी के चारो ओर चक्कर लगाते हैं। इनसे हमें कई तरह की सूचनाएं प्राप्त होती हैं। इन उपग्रहों से दुर्गम स्थानों पर दूरदर्शन और टेलीविजन सेवाओं का विस्तार सम्भव हो सका हैं। संचार उपग्रह से मौसम सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती हैं।

भारत का पहला कृत्रिम उपग्रह आर्यभट्ट था। जो 19 अप्रैल 1975 को बैकानूर से प्रक्षेपित किया गया इसरो ने 1983 में इनसेट प्रणाली स्थापित की इसरो ने संचार उपग्रह जीसेट 10 का 29 सितम्बर 2012 को प्रक्षेपण किया। इनसेट 2 बी 23 जुलाई 1994 को प्रक्षेपित किया जिसने देश में संचार सुविधाओं की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई 1994 से दूरदर्शन पर मैट्रो चौनल व अन्य क्षेत्रीय चौनलों की शुरुआत इनसेट 2 बी के माध्यम से की थी।

एस.एम.टी.पी ईमेल – सिंपल मेल ट्रांसफर प्रोटोकॉल ईमेल को एक मशीन से दूसरे मशीन में भेजने वाला मानक प्रोटोकॉल है। दूरस्थ प्रक्रिया कॉल आरपीसी वह प्रोटोकॉल है। जिसमें एक प्रोग्राम का उपयोग नेटवर्ककेविवरण की समझ के बिना एक नेटवर्क पर दूसरे कंप्यूटर में स्थित प्रोग्राम से सेवा के लिए अनुरोध किया जा सकता है। इसको 1982 में पहली बार उपयोग में लिया गया था। हालांकि अपनी स्थापना के 40 साल बाद भी यह सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला ईमेल प्रोटोकॉल बना हुआ है।

मोबाइल फोन– मोटोरोला हैंडहेल्ड मोबाइल फोन बनाने वाली पहली कंपनी थी। 3 अप्रैल 1973 को मोटोरोला के शोधकर्ता और कार्यकारी मार्टिन कूपर ने अपने प्रतिद्वंद्वी बेल लैब्स के डॉ. जो.एल. एस.एंगेल को कॉल करके हैंडहेल्ड सब्सक्राइबर उपकरण से पहला मोबाइल टेलीफोन कॉल किया।

सबसे पहले कलकत्ता में सेल्यूलर फोन को व्यावसायिक तौर पर पेश किया गया था। भारत में मोबाइल फोन की शुरुआत 31 जुलाई 1995 में हुई थी। मोदी टेल्स्ट्रा नाम की कंपनी ने भारत में इस सेवा की शुरुआत की थी।

स्मार्टफोन – स्मार्ट फोन उन मोबाइल फोनों को कहते हैं, जिनकी कम्प्युटिंग क्षमता तथा कनेक्टिविटी आधारभूत फोनों की तुलना में अधिक होती है।

भारत में पहला एंड्रायड स्मार्टफोन 2008 में लॉन्च किया था। और यह स्मार्टफोन उस समय की दिग्गज कंपनी एच.टी.सी की तरफ से भारतीय मार्केट में पेश किया गया था।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस– आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के जनक जॉन मैकार्थी हैं। ए.आई संचार उपकरण दो या दो से अधिक पक्षों के बीच बेहतर संचार की सुविधा प्रदान करते हैं। कई मामलों में वे उपयोगकर्ताओं को सहायक संसाधनों की ओर निर्देशित करते हैं।

उदाहरण के लिए चौटबॉट ग्राहक सेवा के लिए सबसे व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले संचार उपकरणों में से हैं।

भारत का आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग उद्योग, स्वास्थ्य सेवा, वित्त, कृषि, शिक्षा और ई–कॉमर्स जैसे क्षेत्रों में विस्तार कर रहा है। स्टार्टअप और कंपनियां चेटबोट, वर्चुअल असिस्टेंट और प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स जैसे ए.आई एप्लिकेशन विकसित कर रही हैं। विप्रो, माइक्रोसॉफ्ट रिसर्च इंडिया और फिलिप्स इनोवेशन सेंटर जैसी प्रमुख बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने अनुसंधान केंद्र और ए–आई–केंद्रित पहल स्थापित की हैं। हालाँकि, उभरती एआई प्रौद्योगिकियों में निवेश, गुणवत्ता डेटासेट तक पहुंच, नैतिक विचार और कौशल अंतराल जैसी चुनौतियों को संबोधित करने की आवश्यकता है। निरंतर निवेश और सहयोग के साथ, भारत में एआई अनुसंधान और विकास में वैश्विक नेता बनने की क्षमता है। वर्तमान और आने वाले समय में यह बहुत ज्यादा कारगार साबित होने वाला है।

पत्रिका में प्रकाशित आलेख/ विचार लेखकों के अपने हैं।

टमाटर में सूत्रकृमियों का प्रकोप एक बड़ी समस्या : समाधान

रामावतार यादव[1] केशव मेहरा[2] दुर्गा सिंह[3] मदन लाल रैगर[4] और मुकेश चौधरी[1]

परिचय – सूत्रकृमि अति सूक्ष्म धागे के आकार का कीट होता है। इन्हें 'गोल कृमि या धागा कृमि' भी कहा जाता है। जो पूर्ण रूप से परजीवी होते हैं। इनमे पैर व श्वसन तंत्र का अभाव होता है तथा इनकी सक्रियता के लिए भूमि में नमी होना आवशयक है। यह मुख्यतः पौधे की जड़ों की कोशिका में प्रवेश कर उसमे कुछ ऐसे एंजाइम छोड़ते हैं। जिसके पादपों में मौजूद हॉर्मोन का अनुपात बिगड़ जाता है, जिससे पौधे की जड़ो में अनावश्यक रूप से कोशिका विभाजन होने लगता है और पौधे की जड़ों में गांठे बन जाती हैं। पौधों की जड़ों में गांठे बनने से पौधा पर्याप्त मात्रा में पानी और खनिज लवणों का अवशोषण नहीं कर पाता हैं, जिससे पौधें की वद्धि रुक जाती है। एक शोध के अनुसार यह टमाटर की फसल में लगभग 60–65 प्रतिशत तक नुकसान कर सकता है।

➢ सूत्रकृमि से प्रभावित रोग के लक्षण :

1. टमाटर का पौधा मुरझाया हुआ व थोड़ा पीला नजर आता है तथा पौधा दूसरे सामान्य पौधे से बोना रह जाता है।
2. पौधे को उखाड़कर देखने पर इसकी जड़ों में छोटी से लेकर बड़ी गांठे नजर आती हैं।
3. प्रभावित पौधे में पत्ती, फूल व फल समय से पूर्व झड़ने लगते हैं।

➢ सूत्रकृमि का दूसरे सूक्षजीवो के साथ सम्बन्ध :

सूत्रकृमि से प्रभावित पौधा मृदा में उपस्थित दूसरे सूक्ष्मजीव जैसे जीवाणु, कवक व विषाणु के प्रति सवेंदनशील हो जाता हे जिससे इनका आक्रमण सामान्य की तुलना में अधिक होता हैं। मुख्य समस्या यह आती हे की रोग प्रतिरोधक क्षमता वाली किस्मो में उसकी रोग प्रतिरोधकता समाप्त हो जाती हैं।

➢ सूत्रकृमि की रोकथाम

1. ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई :

मई से जून के महीने मे मिट्टी पलटने वाले हल से लगभग 15 से 30 सेंटीमीटर गहरी मिट्टी को पलट कर छोड़ देवें। यह प्रकिया 15 दिन में दोहरायें, जिससे सूत्रकृमियों के अण्डे व डिंभक मृदा की उपरी सतह पर आ जाते हैं जो सीधे सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आने से नष्ट हो जाते हैं, जिससे सूत्रकृमि के प्रकोप को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

2. मृदा सौर निर्जलीकरण द्वारा :

यह नर्सरी में सूत्रकृमि नियंत्रण की एक आसान, सुरक्षित व प्रभावशाली विधि है। इसमें गर्मियों में (मई से जून) के महीने में मृदा में सिंचाई करके उस भूमि को 25–30 माइक्रोन मोटी पारदर्शी प्लास्टिक की थैली से 4 से 5 सप्ताह के लिए ढक देते हैं, जिससे ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण मृदा का तापक्रम बढ़ेगा और सूत्रकृमि नष्ट हो जायेंगे।

3. रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करके :

सूत्रकृमियों प्रबंधन की यह सबसे सरल, सस्ती व प्रभावकारी विधि है। इसमें टमाटर की प्रतिरोधी किस्में उगानी चाहिए जैसे हिसार ललित, पंजाब एन आर 7, एन टी –3, एन टी – 12, सिलेक्शन– 120, पूसा–120, पूसा हाइब्रिड–2, पूसा हाइब्रिड–4, अर्का वरदान इत्यादि।

4. फसल चक्र अपनाकर :

जिस खेत में इसका प्रकोप अधिक होता हे वहाँ पर लगातार एक फसल नहीं बोनी चाहिए। क्योंकि लगातार एक फसल बोने पर वह सूत्रकृमि की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती रहती है, इसलिए वहॉ ऐसी फसल की बुवाई करें जिसमें इसका प्रकोप नहीं होता है जैसे– राजमा, मटर, मक्का, गेहूं, ग्वार, पालक, सलाद आदि।

5. रोग रहित पौध का चुनाव :

स्वस्थ, साफ एवं रोगरहित पौध का चुनाव करके बोना चाहिये।

6. जैविक नियंत्रण :

नर्सरी में इसकी रोकथाम के लिए गोबर की खाद में तैयार ट्राइकोडर्मा विरिडी 2.5 ग्राम प्रतिवर्ग मीटर के हिसाब से या सेक्यूडोमोनास फ्लोरोसेन्स 20 ग्राम प्रतिवर्ग मीटर की दर से उपचारित करें।

7. रोग ग्रस्त पौधों को नष्ट करके :

यदि प्रारम्भ में सूत्रकृमि का प्रकोप बहुत कम हो तो रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिये इससे रोग का प्रकोप कम हो जायेगा।

8. खेत को खरपतवार मुक्त रख कर :

जब खेत में जब फसल नहीं होती तो उस समय सूत्रकृमि खरपतवार को अपना आसरा बना लेते हैं। इसलिए अगर खेत में खरपतवार नहीं हो उस अवस्था में सूत्रकृमि भोजन की कमी के कारण मर जायेगा इसलिए खेत को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए।

9. रासायनिक नियंत्रण :

1. टमाटर की पौध को लगाने से पहले कार्बोफ्यूरान 25 ई. सी. के 500 पी पी एम सांद्रता वाले विलयन में 30 मिनिट तक डूबा कर रखे फिर उसको खेत में लगाए।
2. खड़ी फसल में निमेटोड प्रबंधन के लिए फ्लुओपाइरम 34.98 प्रतिशत एस. सी. 1 एम. एल. प्रति लीटर की दर से मृदा में ड्रेचिंग करें।
3. टमाटर की फसल के बीच में गेंदे के पौधे लगाये क्योंकि गेंदे की जड़ों से अल्फा टर्थिएनिल नामक रसायन निकलता है जो निमेटोड को फैलने से रोकता है।
4. पौध रोपण से 10 दिन पूर्व 500 किलो नीम केक प्रति हैक्टर की दर से भूमि में मिलायें।

[1]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता, [2]विषय वस्तु विशेषज्ञ, [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, [4]सह आचार्य
कृषि विज्ञान केन्द, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर (राजस्थान).334006
*ईमेल ramawtaryadav1@gmail.com

बदलते जलवायु परिवेश में संरक्षण खेती का महत्त्व

डॉ. रूपेश कुमार मीणा[1], डॉ चन्द्रभान[1], डॉ. रघुवीर सिंह मीणा[2], डॉ. हनुमानराम[1]

देश के कृषि उत्पादन में टिकाऊपन लाने तथा बढती जनसंख्या का पेटभर ने और पशुओं को पर्याप्तचारा–दाना उपलब्ध कराने के लिए कृषि को बहुत–सी चुनौतियों का सामना करना पड़ता रहा है, जिनमें जनवायु परिर्वतन एक मुख्य चुनौती है। जलवायु परिर्वतन के परिवेश में कृषि का स्वरूप बदल रहा है। आधुनिक कृषि विज्ञान, पौधों में संकरण, कीटनाशकों, रासायनिक उर्वरकों और तकनीकी सुधारों ने फसलों से होने वाले उत्पादन को तेजी से बढाया है। साथ ही यह व्यापक रूप से पारिस्थितिक सन्तुलन के लिए क्षति का कारण भी बना है। इसमें मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रतिकुल प्रभाव के साथ–साथ मृदा की उवर्रा शक्ति बनी रहे तथा जलवायु परिर्वतन के प्रभाव से प्रभावित न हो।

देश की बढती आबादी की खाद्यान्न आपूर्ति के लिए एवं उत्पादन बढाने के लिए संसाधनों का आवश्यकता से अधिक दोहन किया जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप हमारे संसाधनों की गुणवत्ता और मात्रा पर प्रतिकूल प्रभाव पडा है। इन सबके चलते आज कई तरह की समस्याएं हमारी खेती में आगई हैं, जिसमें फसलों की पैदावार और गुणवत्ता में गिरावट, मिट्टी, जल औरवायु में कई तरह के विषैले पदार्थों की उपस्थिति, दालों व अन्य पोषकदारी उत्पादों की कमी हो रही है, प्रमुख है। इसके अलावा खेती में बढती उत्पादन लागत और किसानों की घटती आय चिंता का विषय बना हुआ है। फसल उत्पादन में आ रही उपर्युक्त समस्याओं को ध्यान में रखकर हमें ऐसी संसाधन–संरक्षण संबंधी तकनीकी के बारे में सोचना है, जिससे अच्छी फसल पैदावार का स्तर बने रहने के साथ–साथ संसाधनों की गुणवत्ता भी बनी रहे ताकि वर्तमान पीढी की जरूरतों को पूरा करने के साथ–साथ भावी पीढीयों के लिये भी अपने से अच्छा वातावरण सुनिश्चित किया जा सके। इस संबंध में पर्यावारण संरक्षण मृदा उपजाऊपन एवं उत्पादन बढाने में संरक्षण खेती की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। वर्तमान परिवेश को देखते हुए संरक्षण खेती अत्यंत आवश्यक हैं, क्योंकि इसके प्रयोग से बहुत सारे फायदे पाए गए है। संरक्षण खेती की तकनीकों का फसल उत्पादन में लागत कम करने और प्राकृतिक संसाधनो के संरक्षण में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

संरक्षण खेती के तीन प्रमुख स्तम्भहैः

- मिट्टी के साथ कम से कम छेड़छाड़,
- जमीन के लिए स्थायी आवरण बनाए रखना और
- फसल प्रणाली में पारम्परिक विविधता लाना व फसलों को अदला–बदली करके बोना।

संरक्षण कृषि की संभावनाएँः

- यह कृषि उपज में पारम्परिक विधियों के माध्यम से वृद्धि करके खाद्य सुरक्षा में अपना योगदान देती है।
- यह मृदा अपरदन, लवणीकरण एवं मृदा संबंधी कार्बनिक पदार्थो की कमी जैसी स्थायी समस्याओं का सामाधान कर सकती है। यह सतही जल के वाष्पीकरण में कमी कर जल की कमी से निपटने में सहायता कर सकतीहै।
- यह इनपुट लागत को विशेष रूप से कम कर सकती है, क्योंकि यह जुताई रहित कृषि प्रौद्योगिकी पर आधारित होती है।
- यह क्रॉप बर्निया को प्रति स्थापित करके ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में कटौती करने में सहायता कर सकती है।
- यह सामयिक एवं स्थानिक प्रतिरूप में, फसल विविधीकरण हेतू अवसर उत्पन्न कर सकती है। अतः यह प्राकृतिक पारिस्थितिक को प्रोत्साहन प्रदान करती है।

संरक्षण खेती से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण तकनीकें जीरो टिलड्रिल/शून्य जुताई की खेती

खाद्यान्न फसलों में धान और गेहूं का महत्वपूर्ण स्थान है। धान–गेहूं फसलें प्रणाली भारत में बहुत प्रचलित है। यह फसल प्रणाली देश की खाद्यान्न सुरक्षा के लिए रीढ की हड्डी है। जीरोटिलेज तकनीक का गेहूं की खेती में लागत कम करने और प्रकृतिक संसाधनों के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान है। आधुनिक खेती में संरक्षित टिलेज पर जोर दिया जा रहा है। इस तकनीक द्वारा खेतों को बिना जुताई किए एक विशेष प्रकार की सीडड्रिल द्वारा फसलों की बुवाई की जाती है। जहां बीज की जगह बिना जुती ही रहती है। बुवाई मुख्यतः रबी फसलों जैसे गेहूं, चना, सरसों मे ज्यादा कामयाब सिद्ध हुई है। फसल अवशेषों को जलाने से रोकने व इसके वातावरण व भूमि पर होने वाले कुप्रभावों से बचने के लिये जीरो–टिल पद्धति को नीतिगत स्तर पर ले जाना चाहिए।

भूमि का लेजर समतलीकरण (लेजर लैंड लेवलिंग)

समतलीकरण के उद्देश्य को पूरा करने हेतू नव विकसित तकनीक लेजर लैंडलेवलर का प्रयोग अत्यधिक लाभकारी सिद्ध हुआ है। लेजरविधि एक नई वैज्ञानिक तकनीक है, जिसमें एक विशेष उपकरण द्वारा खेत की मिट्टी को पूरी तरह समतल किया जाता है। समतल भूमि पर फसल उगाने का सबसे बड़ा फायदा पानी की बचत व अधिक फसल उत्पादकता है। सिंचाई का पानी खेत के हरहिस्से में एक समान मात्रा में और सारे खेत में कम समय में फैल जाता है। धान की फसल के लिए तो यह बहुत ही उपयोगी है। जिसमें सिंचाई जल की मात्रा लगभग आधी हो जाती है। आजकल किसानों द्वारा इस तकनीक में बहुत ज्यादा रूचि दिखायी जार ही हैं। इन सुविधाओं का किराये पर उपलब्ध होने की वजह से इनका प्रयोग छोटे किसान भी कर सकते है। लेजर भूमि समतलीकरण से क्षेत्र की असमानता 20 मिलीमीटर तक कम हो जाती हैं परिणामतः सिंचित क्षेत्र में 2 प्रतिशत व फसल क्षेत्र में 3–4 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।इसके अतिरिक्त जल प्रयोग व वितरण की दक्षता में 35 प्रतिशत तक सुधार होता है। सिंचाई जल उत्पादकता, उर्वरक उपयोग दक्षता एवं फसल पकाव में सुधार होता है वह खरपतवार दबाव कम होता है।

[1]कृषि महाविद्यालय, हनुमानगढ़ [2]कृषि अनुसंधानकेन्द्र, श्रीगंगानगर
E-mail: rupeshkumaragro@gmail.com

बेडप्लान्टिंग / मेडो पर खेती

भूमि रुपान्तरण में परिवर्तन के रुप में बैडप्लाटिंग को सिंचित पारीस्थितिकी में संसाधन संरक्षण तकनीक के रुप में प्रयोग किया जा रहा है। सिमिट ने एक स्थाई फरो सिंचित रेज्डबैड तकनीक विकसित की है। बैडप्लाटिंग का अर्थ है वह प्लाटिंग सिस्टम जिसमें फसल को बैड्स पर लगाया जाता है व सिंचाई कूड़ों में दी जाती है। इस तकनीक में 70–75 से.मी. की दूरी पर मेड़ों बनाई जाती है जिसमें लगभग 35 से.मी. चौडी मेड़ और इतनी ही दूरी व गहराई पर नाली–सी बन जातीहै। इस विधि से बुवाई करने के कई लाभ है। जैसे वर्षा ऋतु में खेती में ज्यादा पानी खड़ा होने से मेड़ो पर उगे पौधे ज्यादा सुरक्षित होते हैं क्योकि अनावश्यक पानी को नालियों में से होकर बाहर निकाला जा सकता है। फसलों की सिंचाई करने पर पानी की मात्रा 20–30 प्रतिशत तक कम लगती है। साथ ही प्रति यूनिट पानी की उत्पादकता भी बढती है। इस तकनीक द्वारा फसल उत्पादन में यह भी देखा गया है कि बीज और खाद की मात्रा 15–20 प्रतिशत कम होती है क्योंकि इनका प्रयोग सिर्फ मेड़ों पर ही किया जाता है। इस विधि में मेडों पर खरपतवारभी कम आते है। इसका कारण यह है कि मेड़ो पर फसल के पौधों की संख्या ज्यादा होती है जिससे खरपतवारों को पनपने का मौका नहीं मिलताहै। यद्यपि नालियों में ज्यादा खरपतवार आते हैं क्योंकि फसल की आरंभिक अवस्थाओं में उनके उगने के लिए पर्याप्त जगह होती है। खरपतवारों की रोकथाम हाथ से चलाने वाले अथवा ट्रैक्टर–चालित यंत्रों द्वारा आसानी से की जासकतीहै। इस प्रकार मेड़ों पर बुआई करने से संसाधनों का कम प्रयोग होने के साथ–साथ पैदावार भी 10–15 प्रतिशत ज्यादा या फिर समतल जमीन पर बुआई करने के बराबर ही मिलती है। इन सबके अतिरिक्त यह प्लान्टिग विधि जड़ वातावरण में बदलाव लाती है और जड़ क्षेत्र में वायु संचार को सुधारती है।

एस.आर.आई. तकनीक का प्रयोग

धान की खेती में सिस्टम आफ राइस इंटेसीफिकेशन (एसआरआई.) तकनीक को अपनाने से प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक उत्पादन के साथमृदा, समय, श्रम और अन्य साधनों का अधिक दक्षतापूर्ण उपयोग होना पाया गया है। इस विधि में पौधों की रोपाई के बाद मिट्टी को केवल नम रखा जाता है। खेत में पानी खड़ा हुआ नहीं रखतेहैं। जल निकास की उचित व्यवस्था की जाती है जिससे पौधों की वृद्धि और विकास के समय मृदा नम बनी रहे। इस प्रकार धान के खेतों में मृदा वायुवीय दशाओं में रहती है, और मृदा में डीनाइट्रीफिकेशन की क्रिया द्वारा दिए गए नाइट्रोजन उर्वरकों का कम से कम ह्रास होता है। साथ ही धान के खेतों से नाइट्रसआक्साइड का उत्सर्जन भी नगण्य होते हैं। एस.आर.आई. विधि से धान की खेती करने पर लगभग 30–50 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत भी होती है। इस विधि का महत्वपूर्ण पहलू पर्यावरण सुधार है। प्राकृतिक संसाधनों का बेहतर प्रयोग और अन्य आदानों जैसे उर्वरक व कीटनाशकों का कम प्रयोग होने से यह विधि पर्यावरण हतैषी भी है। क्योंकि इस विधि से खेतों में पानी खड़ान हीं होते जिससे उनमें मीथेन व नाइट्रसआक्साइड गैसों का निर्माण नहीं होते हैं तथा भूमि जैवे–विविधत ाभी बढ़ती है।साथ ही दिए गए नाइट्रोजन उर्वरकों का लीचिंग द्वारा नाइट्रेट के रूप में कम से कम ह्रास होता है। अतः इस विधि को किसानों में लोकप्रिय बनाने के लिए अत्यधिक प्रचार–प्रसार की जरूरत है।

फसल विविधीकरण

खेती में लगातार एक ही प्रकार की फसलें उगाने व एक ही तरह के आदानों का प्रयोग करने से न केवल फसलों की पैदावार में कमी आयी बल्कि उनकी गुणवत्ता में भी गिरावट दर्ज की गई। एक फसल प्रणाली न तो आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है, और न ही पारिस्थितिक दृष्टि से अधिक उपयोगी है। साथ ही फसल विविधीकरण में प्राकृतिक संसाधनों का भी उचित उपयोग होता है। इसके अलावा किसान माँग और आपूर्ति में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप मूल्यों में उतार–चढ़ाव से कम प्रभावित होते हैं। इस प्रकार कृषि विविधीकरण को अपनाकर खेती कोटि का ऊबनाया जा सकता है। खरीफ में उगायी जाने वाली अधिकांश फसलें एवं उनकी प्रजातियाँ कम अवधि की होती है। साथ ही ये फसलें प्रकाश की अवधि के प्रति असंवेदनशील होती है। अतः ये कम अवधि वाली फसलें प्रणालियों की फसल सघनता व लाभ बढ़ाने में सहायक होती है। अतः फसल विविधीकरण की तकनीकी और कार्यप्रणाली को किसानों तक पहुँचाकर देश में खाद्यान्न उत्पादन और संसाधनों की मात्रा व उनकी गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है। लघु व सीमान्त किसानों के लिये बरानी क्षेत्रों में जोखिम कम कर अधिक आय लेने के लिये फसल विविधीकरण एक आवश्यक घटक भी है। सरंक्षण खेती के अंतर्गतक पास–गेहूँ फसलचक्र में अरहर–गेहूँ और मक्का–गेहूँ फसल चक्रों की अपेक्षा लगभग 1.0–1.5 गुणा ज्यादा मिलती है।

अनुसंधानों द्वाराज्ञातहुआहैकि खेत की बार–बार जुताईकरने से कोई विशेष लाभ नहीं होता और न ही फसल की पैदावार में कोई अतिरिक्त वृद्धि होती है बल्कि अच्छी खासी लागत लगाने के बावजूद किसान को कम आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। अतः इन तकनीकों को किसानों में खेती अधिक लाभप्रद हो सके।

कम पानी से एरोबिक धान उगाने की विधि

जल एक सीमित संसाधन है। देश में कृषि हेतु उपलब्ध कुल जल का लगभग 50 प्रतिशत भाग धान उगाने हेतु प्रयोग में लाया जाता है। धान उत्पादन की इस विधि में धान के बीज को खेत को तैयार कर सीधे ही खेत में बोदिया जाता है। इससे पानी की असीम बचत होती है।चूंकि इस विधि के अंतर्गत खेतों में पानी नहीं भरते हैं इसलिए धान के खेतों में वायुवीय वातावरण बना रहता है। परिणाम स्वरूप विनाइट्रीकरण की क्रिया द्वारा नाइट्रोजन के ह्रास को रोका जा सकता है।साथ ही इस विधि में धान के खेतों से ग्रीन हाऊस गैसों का निर्माण नग्र के बराबर होता है। जलमग्र धान की फसल में दिए गए नाइट्रोजन उर्वरकों का नुकसान मुख्य रूप से अमोनिया वाष्पीकरण, विनाइट्रीकरण व लीचिंग द्वारा होता है जो अनततः हमारे पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं। धान उगाने की एरोबिक विधि में उपयुक्त सभी समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है। इस विधि के उपयोग से पर्यावरण प्रदूषण में भी कमी लाई जा सकती है। दूसरी तरफ धान की फसल में नाइट्रोजन उपयोग दक्षता एवं उत्पादकता में भी वृद्धि की जा सकती है। अतः भारत के कम पानी वाले क्षेत्रों में इस तकनीक को उपयोगी बनाने की नितांत आवश्यकता है जिससे हमारे प्राकृतिक संसाधनों का जरूरत से ज्यादा दोहन न हो।

मादा पशुओं में रिपीट ब्रिडिंग : कारण एवं उपचार

डॉ. राम निवास ढाका[1], डॉ. चारू शर्मा[2], डॉ. के जी व्यास[3], डॉ. दशरथ प्रसाद[4] और कोमल सिंह[5]

पशुओ मे यह एक प्रजनन विकार है जिसकी वजह से क्षेत्र के पशुपालको को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। यह विकार पशुपालकों तथा कृत्रिम गर्भाधान तकनीशियनों के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे पशु पालकों को पशु के गर्भ धारण करवाने मे परेशानी होती है। इसमें पशु दो या दो से अधिक बार गर्भाधान करने के बावजूद गर्भधारण नहीं कर पाता तथा अपने नियमित मदचक्र में बना रहता है। सामान्य परीक्षण के दौरान वह लगभग निरोग लगता है । कभी कभी दुधारू पशु समय से मद मे नहीं आते है जिसकी वजह से पशुपालक चिंतित दिखाई देते है। यौवनावस्था प्राप्त करने के बाद मादा पशु में मद चक्र आरंभ हो जाता है तथा यह चक्र सामान्यतः तब तक चलता रहता है जब तक कि वह बूढा होकर प्रजनन में असक्षम नहीं हो जाता।

पशु का बार–बार गर्मी में आने की यह वजह होती है

पशुपालक द्वारा पशु के मद काल में होने का सही पता न लगा पाना, अकुशल व्यक्ति से कृत्रिम गर्भाधान करना, पशु के कुपोषण तथा पशु में तनाव के कारण पशु गर्भ धारण नहीं कर पाता है। पशु मे जन्म से अथवा जन्म के बाद प्रजनन नली के अंगों में किसी एक खंड का ना होना, अंडाशय का बरसा के साथ जुड जाना, अंडाशय में रसौली, गर्भाशय ग्रीवा का टेढ़ा होना, डिम्ब वाहनियों में अवरोध का होना, गर्भाशय की अंदर की परत में विकार आदि शामिल है। साथ ही इनमें काफी देर से अथवा मदकाल के समाप्त होने पर गर्भाधान कराने के कारण अंडाणु का निषेचन योग्य समय निकल जाना, अंडाणु अथवा शुक्राणु में विकार, अंडाणु का अंडाशय से बाहर न आना, फोलिकल का समय हो जाना, सिस्टिकओवरी, कोरपस ल्युटियम का असक्षम होना, एक ही सांड के सीमन का कई पीढियों में प्रयोग, शुक्राणु व अंडाणु में मेल न होना, मद काल की प्रारम्भिक अवस्था में गर्भाधान कराना जिससे अंडाणु के पहुंचने तक शुक्राणु पुराने हो जाते हैं, आदि प्रमुख हैं। कभी कभी पशु के प्रजनन अंगो मे सूजन एवं रोग जैसे ट्रायकोमोनास फीटस, विब्रियो फीटस, ब्रूसेलोसिस, आई.बी. आर–आई.पी.वी. कोरिनीबैक्टेरियम पायोजनीज तथा अन्य जीवाणु व विषाणु जिनसे गर्भाशय में सूजन हो जाती है। इन सब की वजह से गर्भपिण्ड की प्रारम्भिक अवस्था में ही मृत्यु हो जाती है।

इस तरह करे उपचार व निवारण

पशु पालक को पशु की खुराक पर विशेष ध्यान देना चाहिए। कुपोषण के शिकार पशु की प्रजनन क्षमता कम हो जाती है। पशु में खनिज मिश्रण व विटामिन्स ई आदि की कमी से प्रजनन विकार उत्पन्न हो जाते हैं। पशु पालक को पशु के सही मद अवस्था में नहीं होने की दिशा में उसका जबरदस्ती गर्भाधान नहीं करना चाहिए तथा कृत्रिम गर्भाधान तकनीशियन को भी अनावश्यक रूप से पशु को टीका नहीं लगाना चाहिए क्योंकि इससे रिपीटब्रीडर की संख्या बढ़ती है और पशु को कई बीमारियां होने का खतरा बढ़ जाता है। देर से अंडा छोड़ने वाले पशु में 24 घंटे के अंतराल पर 2–3 बार गर्भाधान कराने से अच्छे परीक्षण मिलते है। रिपीटब्रीडर पशु को गर्भाशय ग्रीवा के मध्य में गर्भाधान करना उचित है क्योंकि कुछ पशुओं में गर्भधारण के बाद भी मदचक्र जारी रहता है। ऐसे पशु का गर्भाशय के अंदर गर्भाधान करने से गर्भपिण्ड की मृत्यु की पूरी संभावना रहती है। रिपीट ब्रीडर पशु का परीक्षण व उपचार पशु चिकित्सक से कराना चाहिए ताकि इसके कारण का सही

विषय विशेषज्ञ[1] (पशुपालन), विषय विशेषज्ञ[2] (गृह विज्ञानं प्रसार शिक्षा), विषय विशेषज्ञ[3] (सस्य विज्ञान) और वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र (स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर) पोकरण – 345021 (जैसलमेर) और पीएचडी शोधार्थी[4], सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय , बीकानेर email- ramniwasbhu@gmail.com

पता लग सके। ऐसे पशु को कई बार परीक्षण के लिये बुलाना पड़ सकता है क्योंकि एक बार पशु को देखने से पशु चिकित्सक का किसी खास नतीजे पर पहुंचना कठिन होता है।

मद मे नहीं आने के मुख्य कारण

प्रायः यह देखा गया है की कभी कभी पशु में बाहर से गर्मी के लक्षण दिखायी नहीं देते लेकिन पशु खामोश अवस्था में गर्मी में आता रहता है और नियत समय पर अंडाशय से अंडाणु भी निकलता है। लेकिन पशुपालक को इस तरह के पशु मद की जानकारी नहीं हो पाती है। पशु मे कुपोषण, वृद्धावस्था व बह्मा परजीवी तथा लम्बी बीमारियां, ऋतु का प्रभाव एवं प्रजनन अंगों के विकार इत्यादि पशु के मद मे नहीं आने के प्रमुख कारण हो सकते है। कभी कभी पशु के अंडाशय में एक सिस्ट बन जाता है जिससे प्रोजेस्ट्रोन हार्मोन का स्राव होता है फलस्वरूप पशु गर्मी में नहीं आता। गर्भाशय में मवाद पड़ जाने अथवा अन्य किसी कारण से अंडाशय में कार्पस ल्युटियम खत्म न होकर क्रियाशील अवस्था में बनी रहती है जोकि पशु को गर्मी में आने से रोकती है।

इस तरह करे उपचार

पशु को सदैव सन्तुलित आहार देना चाहिए देना चाहिए तथा पशु के आहार में खनिज मिश्रण अवश्य मिलाना चाहिए। साथ ही कौपर–कोबाल्ट की गोलियां भी पशु को दी जा सकती हैं। पशुपालको को आवश्यकतानुसार पशु को पेट के कीड़ों की दवा भी अवश्य देनी चाहिए। यदि पशु स्थिर कोर्पस ल्युटियम अथवा ल्युटियल सिस्ट एवं पशु के गर्भाशय में पस इकट्ठी हो जाती है जिसके कारण पशु गर्मी में नहीं आता तथा समय–समय पर उसकी पशु यौनी से सफेद रंग का डिस्चार्ज निकलता देखा जा सकता है। पशु का परीक्षण करने पर उसकी यौनी में सफेद रंग का द्रव पदार्थ दिखता है। इस बीमारी का सबसे अच्छा व आधुनिक इलाज प्रोस्टाग्लेंड़िन एफ–2 अल्फा का इंजेक्शन देना है। इस टीके के प्रयोग से ल्युटियल सिस्ट खत्म हो जाती है जिससे पशु मद में आ जाता है और गर्भाशय में भरा सारा मवाद बाहर निकल जाता है। पशु के गर्भाशय ग्रीवा पर ल्युगोल्स आयोडीन का पेंट करने से भी इस विकार में लाभ होता हैं। गोनेडोट्रोफिन्स, विटामिन ए तथा फोस्फोरस के टीके भी मद में नहीं आने पर दिए जाते हैं लेकिन ये पशु चिकित्सक द्वारा ही लगाए जाने चाहिए। पशु के मद में न आने पर उसे पशु चिकित्सक को दिखाना चाहिए।

लेखक अपने आलेख

dee@raubikaner.org /
rajeshvermasct@gmail.com

पर हिन्दी फोन्ट कृतिदेव 10 में वर्ड फाईल व पीडीएफ दोनों में भिजवाने का श्रम करें।

मई माह के कृषि कार्य

डॉ. पी.एस. शेखावत, निदेशक अनुसंधान,
स्वा. के.रा.कृ.वि. बीकानेर

सस्य विज्ञान

देशी तथा नरमा कपास :– बुवाई का उपयुक्त समयः—देशी कपास की बुवाई का उपयुक्त समय अप्रेल माह है परन्तु मई माह के प्रथम सप्ताह तक भी बुवाई की जा सकती है। विलम्ब से की गई बुवाई से फसल की उपज में कमी पाई गई है। नरमा की बुवाई का उपयुक्त समय 1 मई से 20 मई है। साधारणत्या मई माह में बुवाई कर सकते हैं। **बीज की मात्राः**— देशी कपास 3.75 किलोग्राम तथा नरमा में 4.0 किलोग्राम बीज प्रति बीघा काम में लेवे। बी.टी. कॉटन की बीज दर 400 ग्राम प्रति बीघा रखें। **खाद एवं उर्वरकः**—देशी कपास तथा नरमा में गोबर की खाद 2–3 टन प्रति बीघा के हिसाब से बुवाई के लगभग एक माह पूर्व डालकर जुताई कर मिट्टी में मिला देवें। देशी कपास में 22.5 किलोग्राम नत्रजन एवं 5 किलोग्राम फास्फोरस प्रति बीघा काम में लें। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा बिजाई के समय काम में लें। नरमा के लिये 25 किलोग्राम नत्रजन तथा 10 किलोग्राम फास्फोरस प्रति बीघा डालें। **उपयुक्त किस्में:—देशी कपासः**— आर. जी.–8, आर.जी.–18 तथा आरडीएच.–9 **नरमाः**— आर.एस.टी.–9,, आर.एस..–2013, आर.एस..–810, एळ एच एच–144, राज एच एच–16, बीकानेरी नरमा तथा गंगानगर अगेती हैं। बी.टी. कॉटन की प्रमुख किस्में – एमआरसीएच – 6304, 6025, आरसीएच0 – 314, 134, जेकेसीएच – 1947 है। **बिजाई की विधिः**— देशी कपास की बिजाई कतारों में 60 से.मी. पर तथा पौधे से पौधे की दूरी 20–25 से.मी. रखें नरमा की बिजाई 67.5 से.मी. पर कतारों में करें। बी.टी कॉटन की बुवाई 108 सेमी X 60 सेमी पर करें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें जिससे सूर्य की तेज किरणें भूमि के अन्दर प्रवेश कर जाती है। जिससे भूमिगत कीटों के अण्डें, शंकु, लटें एवं वयस्क नष्ट हो जाते है।

धान : किस्में :— पी.आर.–106, पी.आर. 1121, बी.के. 190 एवं पी.बी. 1 **धान की नर्सरी की तैयारी :**— एक बीघा रोपाई के लिए 100 वर्ग मीटर नर्सरी लगावें। इसमें 250 किग्रा गोबर की खाद, 2 किग्रा यूरिया व 8 किग्रा सिंगल सुपर फास्फेट डालें। इस क्यारी में 6 किग्रा बीज छिड़कावा विधि द्वारा डाल कर उसे हल्की मिट्टी या गोबर की खाद से ढक देवें। नर्सरी में बुवाई का उपयुक्त समय मई का दूसरा पखवाड़ा है। क्यारी हमेशा तर रखी जावें और पानी एक इंच से अधिक नही खड़ा रहे। नर्सरी के खेत की अधिक गहरी जुताई नहीं करनी चाहिए। आवश्यकता होने पर 15 दिन बाद नर्सरी में 2 किग्रा. यूरिया टॉप ड्रेसिंग विधि से छिड़क देवें।

जायद मूंग :– सिंचाई :— जायद मूंग में मई माह में दूसरी सिंचाई देनी चाहिए।

गन्नाः– सिंचाई : प्रथम सिंचाई बुवाई के 25–30 दिन बाद की जानी चाहिए तथा शेश सिंचाईयां 15 दिनों के अंतराल पर की जानी चाहिए। गन्ने को कुल 18–20 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है।

पौध व्याधि

नरमा–कपासः जीवाणु झुलसा रोग : इस रोग से ग्रसित बीजों से बीजाई के 30–35 दिन में बीजों, पत्तों पर (खास कर किनारों पर) जलस्क्ति, गहरे हरे, गोल धब्बे बनते है। जो बाद में भूरे काले हो जाते है और बीज पत्र किनारों से सूखने लगते है या पीले पड़कर मुरझा जाते है। यदि बीजाई के बाद इस अवधि में बरसात 20–30 मिमी हो जाती है तो रोग का प्रकोप बढ़ जाता है। **रोकथाम :**— बोये जाने वाले बीजों को 1 ग्राम स्ट्रेप्टोसाईक्लीन या 10 ग्राम प्लान्टोमायसिन प्रति 10 लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर उसमें भिगोकर उपचारित करें। रेशेदार बीजों को 7–8 घन्टे व रेशेमुक्त (डीलिन्टेड) बीजों को 2–3 घंटे भिगोयें। **पत्ता मरोड़ या लीफ कर्ल रोगः**— इस रोग के लक्षण ऊपर की पत्तियों में सबसे पहले आते हैं पत्तियों की बारीक नसें गहरी रही व मोटी हो जाती हैं पत्तियां फिर धीरे–धीरे ऊपर की ओर या नीचे की तरफ (ज्यादातर उपर की ओर) कप या प्यालेनुमा हो जाती है। कभी–कभी पत्तियों के पीछे नई विभिन्न आकृति की पत्तियां मुख्य नसों पर निकलती हैं जिन्हें इनेशन कहते है। रोग का प्रकोप जितना जल्दी होता है उतनी ही उपज अधिक प्रभावित होती है। यह रोग सफेद मक्खियों द्वारा फेलता है। बीजाई पूर्व या बाद में अच्छी वर्शा थोडे समय के अंतर पर होती है तो रोग का प्रकोप ज्यादा होता है। **रोकथामः**—देशी कपास व रोगरोधी संकर किस्मों का प्रयोग करें। खासतौर पर अन्तर्राश्ट्रीय सीमा वाले खेतों या जहां पिछले सालों में अधिक प्रकोप रहा हो। रोग से प्रभावित किस्मों को कम बोये और बागों के अन्दर या नजदीक न बोयें। खेत के चारों

तरफ सड़कों व नहरों के दोनो ओर पीली बूटी, कंगी बूटी, भांग भाखड़ी आदि खरपतवारों को नश्ट करते रहें। सफेद मक्खियों के नियंत्रण के लिए सिफारिस की गई कीटनाशी दवाओं का छिड़काव समय–समय पर करते रहें।

मूंगफली – कॉलर रोट व जड़गलन रोग :–मूंगफली में कॉलर रोट एवं जड़गलन की रोकथाम हेतु बुवाई से 15 दिन पहले एक किलोग्राम ट्राइकोड्रमा हरजेनियम प्रति बीघा की दर से 12–15 किलो गोबर की खाद में मिलाकर छाया में रख दें एवं बुवाई के समय भूमि में मिला दें तथा साथ में बुवाई के समय प्रति किलो बीज को 10 ग्राम ट्राइकोडरमा पाऊडर से उपचारित कर बुवाई करें अथवा 2.5 किग्रा ट्राइकोडरमा वायरेन्स प्रति बीघा की दर से 50 किलोग्राम गोबर की खाद में मिलाकर बुवाई के समय भूमि उपचार एवं 10 ग्राम ट्राइकोडरमा वायरेन्स प्रति किग्रा की दर से बीज उपचार अधिक प्रभावी पाया गया है। उपरोक्त जैव उपलब्ध न होने पर कार्बेन्डिजिम 50 डब्ल्यूपी 2 ग्राम प्रति किलो बीज या कारबोक्सीन 37.5%+ थायरम 37.5% 2 ग्राम प्रतिकिलो बीज या टेबूकोनाजोल 2 डीएस 1.5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करें।

धान (जीवाणु झुलसा रोग) : बीजोपचार : बोये जाने वाले बीजों को 10 प्रतिशत नमक के घोल (एक किलो नमक को 10 लीटर पानी में) से उपचारित करें। नीचे बैठे स्वस्थ बीजों को साफ पानी से धोकर स्ट्रेप्टोसाईक्लीन 1 ग्राम या प्लान्टोमायसिन 10 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 6 किलो बीज की दर से 12 घंटे भिगोकर उपचारित करें। बाद में बीजों को निकालकर 24 घंटे टाट या बोरी के कपड़े से लपेटकर रखकर बोने के काम में लें। 15 दिन बाद नर्सरी में पौधों पर जाइनेब 0.3 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करें। **बैकाने रोग** :– रोगकी रोकथाम के लिए 10 लीटर पानी में 20 ग्राम कार्बेन्डिजिम 50 डब्ल्यूपी 1 ग्राम स्ट्रेपटोसाइक्लिन के घोल में बीज को 12 घंटे तक भिगोकर बिजाई करें तथा धान की पंजीरी की जड़ को कार्बेन्डिजिम 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से 6 घंटे तक डुबोकर खेत में बीजाई करें।

कीट प्रबन्धः

नरमा व देशी कपास :– दीमक प्रभावित खेतों में पलेवा व जुताई पूर्व 6 किलो मिथाइलपेराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण प्रति बीघा की दर से खेत में दीमक की रोकथाम हेतु प्रयोग करें। जिन किसानों को कपास की बिजाई करनी है वे बीज में गुलाबी लट की रोकथाम के लिए 4 से 40 किग्रा बीज को एल्यूमीनियम फास्फाइड की 3 ग्राम की एक टिकिया से कम से कम 24 घण्टे धूमित करें। रेशे रहित एक किग्रा नरमें के बीज को 4 ग्राम थायोमिथोक्जाम 70 डब्ल्यू.एस. से उपचारित कर पत्ती रस चूसक हानिकारक कीट एवं पत्ती मरोड़ वायरस बीमारी को कम किया जा सकता है। सफेद मक्खी के परपोशी पौधो जैसे सब्जियो, फूल वाले पौधों व खरपतवारो पर जॉच–पड़ताल करते रहे तथा उसका प्रबंधन करे। सफेद मक्खी के ग्रीश्म कालिन परपोशी खरपतवारो को समय–समय पर हाथ से उखाड़कर, जला कर या फिर खरपतवारनाशक दवा का छिड़काव कर नश्ट करें ताकी आगामी कपास की फसल को इस कीट के प्रकोप से बचाया जा सके। ग्रीश्म कालिन फसले (भिंडी, बैंगन, टमाटर, मिर्च, पुदिना व कद्दूवर्गीय) सफेद मक्खी के लिए एकांतरिक परपोशी का काम करती है अतः इन फसलो में इस कीट का प्रकोप दिखाई पडने पर ट्राइजोफॉस 40 ई.सी. की 2.0 मिली या थायोमिथोक्जाम 25 डब्ल्यु.जी. की 0.50 ग्राम मात्रा का प्रति लिटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करे।

मूंगफली में बीजोपचारः– (1) जहाँ दीमक का प्रकोप हो वहां 4 मि.ली. क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से मूंगफली की गुली को उपचारित करें। (2) जहां सफेद लट का प्रकोप हो वहां क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. 20 मि.ली. या क्लोथाइलिडिन 50 डब्ल्यू.जी. 2 ग्राम या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 3 मि.ली प्रति किलोग्राम गुली को उपचारित करें। **नोटः**– जहां भूमि उपचार नहीं किया गया हो वहां बीजोपचार अवश्य करें।

गन्नाः– जिन खेतों में गन्ना अंकुरित हो रहा है। उन खेतों में तना छेदक व पायरिला इन्हे हानि पहुंचाने लग जाते है। इनके बचाव के लिए फ्यूराडान 3 प्रतिशत कण, 6 किग्रा/बीघा की दर से पहली सिंचाई के तुरन्त बाद प्रयोग करें। मोडी की फसल में दीमक व जड़ छेदक की रोकथाम के लिए क्लोरोपाइरिफॉस 20 ई.सी. 1.25 लीटर/बीघा की दर से दें।

Printed and published by Prof. Subhash Chandra on behalf of Nidesak Prasar Shiksha and Printed at M/s Kishan Enterprises, Magaram Colony, Outside Jassusar Gate, Bikaner and published at Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Bikaner, Editor : Prof. Rajesh Kumar Verma.